RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल–011/2015-17

ओ३म्

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख पत्र

वर्ष: 45, अंक : 51 एक प्रति 2 : रुपये

कुल पृष्ठ : 8

रविवार 22 मार्च, 2020

विक्रमी सम्वत् 2076, सृष्टि सम्वत् 1960853120

दयानन्दाब्द : 196 वार्षिक शुल्क : 100 रुपये

आजीवन शुल्क : 1000 रुपये

दूरभाष : 0181-2292926, 5062726

E-mail: apspunjab2010@gmail.com,

www.aryapratinidhisabha.org

वर्ष–45, अंक : 51, 19-22 मार्च 2020 तदनुसार 9 चैत्र, सम्वत् 2076 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

दो विरूप मिलकर बच्चे का पालन करते हैं

ले०–स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

द्वे विरूपे चरत: स्वर्थेऽअन्यान्या वत्समुप धापयेते।
हरिरन्यस्यां भवति स्वधावाञ्छुक्रोऽअन्यस्यां ददृशे सुवर्चा:।।

-यजु:० ३३।५

शब्दार्थ-द्वे= दो **विरूपे**= विरूप, किन्तु **स्वर्थे**= उत्तम प्रयोजन वाली **चरत:**= विचरती हैं, **अन्यान्या**= परस्पर मिलकर **वत्सम्**= बच्चे को **उप+धापयेते**= समीप होकर दूध पिला रही है, **अन्यस्याम्**= दूसरे के निमित्त से **स्वधावान्**= जीवनशक्ति पाकर **हरि:**= हरि **भवति**= बनता है, **अन्यस्याम्**= दूसरे के निमित्त से **सुवर्चा:**= उत्तम तेजस्वी होकर **शुक्र:**= शुद्ध और शोधक **ददृशे**= दीखता है।

व्याख्या–प्रकृति और पुरुष दोनों परस्पर विरूप हैं। पुरुष= परमेश्वर अपरिणामी, अविकारी, कूटस्थ, सर्वज्ञ है। प्रकृति परिणामिनी, विकारिणी, अचेतन है। दोनों में इतना अन्तर=विरूपता होने पर भी एक बात में दोनों समान हैं। जीवरूप वत्स की दोनों पालना करते हैं। जीव का भोगाधिष्ठान=शरीर, भोग के साधन=इन्द्रियाँ, तथा भोग की सामग्री=इन्द्रियों के विषय–ये सभी प्रकृति की देन हैं। नि:सन्देह भोग की लालसा आत्मा में है, और उस लालसा की पूर्त्ति प्रकृति से होती है। प्रकृति के सहयोग के बिना जीव संसार का एक भी कार्य नहीं कर सकता। जीव के सामने दो लक्ष्य हैं, एक भोग दूसरा मोक्ष। भोग प्रकृति से ही मिलता है। भोग का देना दूध पिलाना है। जीव का भोगाधिष्ठान, जीव के भोग–साधन तथा उनकी भोग–सामग्री नि:सन्देह प्रकृति से बनती है, किन्तु कौन बनाता है? यदि परमात्मा जीव के कर्मों के फलस्वरूप यह सब सामान न दे तो इससे भोगप्राप्ति ही न हो, अत: लौकिक भोग जहाँ प्रकृति से मिलता है, वहाँ परमात्मा उसका प्रधान कारण है। इसलिए वेद ठीक कहता है–**'द्वे विरूपे चरत: स्वर्थे अन्यान्या वत्समुप धापयेते।'**

जीव का दूसरा लक्ष्य मोक्ष है। मोक्ष की प्राप्ति में प्रकृति तथा परमात्मा दोनों की सहायता जीव को लेनी पड़ती है। मानवदेह को मुनिजन मोक्षद्वार मानते हैं। मानव है ही प्रकृति का बना। प्रकृति निरानन्द है, इसके संसर्ग से आनन्द की आशा बालू में से तल निकालने के समान है। आनन्द परमानन्द, सच्चिदानन्द के साथ सख्य स्थापित करने से मिलता है। सर्वदु: ख त्यागपूर्वक ब्रह्मानन्द की प्राप्ति का नाम मोक्ष है। दो का दूध जीव यद्यपि युगपत् पी रहा है, तथापि एक समय में दोनों में से किसी एक के साथ ही वह अपनी घनिष्ठता रखता है। जब प्रकृति के साथ उसकी घनिष्ठता होती है तब **'हरिरन्यास्यां भवति स्वधावान्'**= यह स्वधावान्=प्रकृति वाला होने से हरि=विषयों से ह्रियमाण हो रहा है–कभी इसे आँख रूप की ओर खींचती है, कभी कान शब्द के लिए इसके कान ऐंठता है, कभी नाक गन्ध के गन्ध की ओर ले–जाती है, कभी रसना इसे रस का रसिया बना देती है। इस प्रकार प्रकृति के वश में होकर, केवल प्रकृति का दूध पीकर विषयों के विषय–विष से विद्ध हो जाता है। जब प्रकृति से विरत होकर, उसकी पोल जानकर परमात्मा की ओर झुकता है तब–**'शुक्रो अन्यस्यां ददृशे सुवर्चा:'**= परमात्मा के सङ्ग से यह **सुवर्चा:**= उत्तम तेजस्वी होकर शुक्र हो जाता है। भगवान् के 'भर्ग:' को धारण करने से इसके सब मल जल गये हैं। मल के हट जाने से अब यह सुदीप्त हो उठा है। अत: यह केवल स्वयं ही शुद्ध नहीं है, वरन् दूसरों को भी शुद्ध कर सकता है और करता है।

(स्वाध्याय संदोह से साभार)

नवसम्वत- नव वर्ष के शुभ अवसर पर

हार्दिक बधाई

नववर्ष–नवसम्वतसर 2077 चैत्र सुदी प्रतिपदा दिनांक 25 मार्च 2020 से आरम्भ हो रहा है। सृष्टि सम्वत् 1960853121 के शुभ अवसर पर तथा विक्रमी सम्वत् 2077 के शुभारम्भ पर हम आर्य मर्यादा के सभी पाठकों, आर्य समाजों व आर्य शिक्षण संस्थाओं के अधिकारियों, कार्यकर्त्ताओं, प्रिंसीपलों, अध्यापकों, प्राध्यापकों तथा सभी आर्य बन्धुओं व आर्य बहनों को आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की ओर से, आर्य विद्या परिषद पंजाब की ओर से हार्दिक शुभकामनाएं भेंट करते हैं व हार्दिक बधाई देते हैं।

हार्दिक शुभ कामनाओं सहित

सुदर्शन कुमार शर्मा प्रधान

प्रेम भारद्वाज महामंत्री

सुधीर कुमार शर्मा कोषाध्यक्ष

अशोक परूथी एडवोकेट रजिस्ट्रार

समस्त अधिकारी व अन्तरंग सदस्य

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, गुरुदत्त भवन,

चौक किशनपुरा जालन्धर

"महर्षि जी ने धर्म के सच्चे स्वरूप को दर्शाया"

ले.-पं. खुशहाल चन्द्र आर्य, महात्मा गान्धी रोड़, (दो तल्ला) कोलकत्ता-700007

महर्षि दयानन्द के आने से पहले धर्म को एक मामूली सी चीज समझते थे। मिट्टी के एक खिलौने के समान समझते थे, जो छोटी सी भूल से ही टूट जाता था। जैसे यदि कोई अपने व्यापार के लिए विदेश चला गया तो धर्म के ठेकेदार उसे धर्म से निकाल देते थे। कोई दूसरे के हाथ से रोटी खा ली तो वह भी धर्मच्युत हो जाता था। लोग माथे पर टीका खड़ा करें या पड़ा करें इसी को धर्म समझते थे। सिर पर चोटी गले में जनेऊ डालने मात्र को ही धर्म समझ लेते थे। राम नाम की चद्दर ओढ़ लेने मात्र से ही धर्म समझ लेते थे। मन्दिर में जाकर किसी देवी-देवता के दर्शन मात्र कर लेने को ही धर्म समझते थे। बाकी दिन वह कुछ भी करे उसको छूट मिल जाती थी। हिन्दू जाति अनेक मत-मतान्तरों में बंटी हुई थी। कोई राम का, कोई कृष्ण का, कोई हनुमान जी का, कोई महादेव का, कोई गणेश जी का तो कोई दुर्गा, काली तथा लक्ष्मी का उपासक था तो कोई अन्य देवी-देवताओं का उपासक था। वे अपनी देवी या देवता की मूर्ति सामने रखकर उसको अगरबत्ती दिखाकर आरती उतार लेने से ही धर्म का पालन हो गया समझते थे। स्त्रियाँ उपवास रख लेना या किसी देवी-देवता की कथा सुन लेने मात्र को ही धर्म पालन के लिए पर्याप्त प्रयास कर लेना समझती थी। सही धर्म का बहुत कम लोगों को ज्ञान था। कुछ लोग ही धर्म के बारे में जानते थे। वे अपने तक ही सीमित रखते थे। किसी को बतलाने की आवश्यकता नहीं समझते थे। इस प्रकार धर्म कुछ लोगों की बपौती बन गई थी।

अब प्रश्न उठता है कि धर्म क्या है? धर्म उन गुणों का नाम है जिनको धारण करने से यानि जीवन में उतार लेने से अपना जीवन तो उन्नति व समृद्धि की ओर अग्रसर होवे साथ ही अन्य लोगों को भी प्रेरणा देकर उनका जीवन भी सुखी व शान्तिमय बनावे और मरने के बाद मोक्ष को प्राप्त करें, इस जीवन पद्धति को धर्म कहते हैं। सही मार्ग पर चलना ही धर्म होता है। धर्मग्रन्थ वह होता है जिसमें यह लिखा हो कि क्या काम करने से तुम सुखी बनोगे और क्या काम करने से दु:खी बनोगे। क्या काम करना चाहिए और क्या काम नहीं करना चाहिए। ऐसा धर्मग्रन्थ केवल वेद ही है जिनको महर्षि देव दयानन्द ने अपने सच्चे गुरु स्वामी विरजानन्द की गोद में करीब तीन वर्ष तक बैठकर वेद सम्बन्धी सभी आर्ष ग्रन्थों को पढ़ा और जान लिया कि वेद ही ईश्वरीय ज्ञान हैं और वेद ही सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है और वेदों के हास्य से ही विश्व की यह दयनीय स्थिति हुई है और इसी के प्रचार व प्रसार से ही विश्व पुन: उन्नति व समृद्धि की ओर अग्रसर हो सकता है। यह जानकर साथ ही अपने गुरु को दिये वचनों को पूरा करने के लिए महर्षि ने अपना पूरा जीवन वेद प्रचार परोपकार, मानव उत्थान व प्रचलित कुप्रथाएँ, अन्धविश्वास व पाखण्ड को मिटाने के लिए लगा दिया। महर्षि ने अपने जीवन में क्या-क्या काम किये उनका संक्षिप्त परिचय।

१. वेद ईश्वरीय ज्ञान है-महर्षि दयानन्द ने आने से पहले वेद ऋषि-मुनियों के बनाए हुए मानते थे। परन्तु महर्षि ने गुरु विरजानन्द की गोद में करीब तीन साल बैठकर व्याकरणाचार्य बनकर वेदों के मन्त्रों का सही अनुवाद करना सीख लिया और वेदों के मन्त्रों के आधार पर यह जान लिया कि वेद ऋषि-मुनियों ने नहीं बनाये है बल्कि ईश्वर की वाणी है। कई वेद मन्त्रों में ऋषियों का नाम लिखा हुआ है, जिससे यह भ्रम बनता है कि वेद ऋषियों के बनाए हुए हैं परन्तु सही बात है कि जिस मन्त्र में किसी ऋषि का नाम है वह मन्त्र का कर्त्ता नहीं लेकिन द्रष्टा है इसलिए उस ऋषि का नाम लिखा है। यह भ्रम महर्षि ने दूर किया और वेदों को ईश्वरीय ज्ञान बताया। वेद सम्बन्धी महर्षि की मान्यता है कि ईश्वर ने प्रकृति के परमाणुओं से पूरी सृष्टि की रचना करके यानि पशु-पक्षी, जीव-जन्तु, पेड़-पौधे व नदी-पहाड़ आदि सब बनाकर अन्त में मनुष्यों की उत्पत्ति हिमालय के पठार पर युवा स्त्री-पुरुषों के रूप में की ताकि सृष्टि आगे भी चलती रहे। मनुष्य उत्पत्ति के साथ ही ईश्वर ने चार ऋषियों जिनके नाम अग्नि, वायु, आदित्य, अंगीरा थे और जो सर्वोत्तम पुरुष थे उनके मुख से चार वेद जिनके नाम ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद क्रमश: उच्चारित करवाये। ईश्वर ने वेदों में शिक्षा के रूप में यह बतलाया है कि मनुष्य को क्या काम करने चाहिए और क्या काम नहीं करने चाहिए, उनको मनुष्य अपने जीवन में धारण कर लेवें तो वह अपना जीवन भी सुखी व आनन्दमय बना सकता है। साथ ही दूसरों का भी बना सकता है और मृत्यु के बाद मोक्ष को भी प्राप्त कर सकता है। यदि मनुष्य उत्पत्ति के बाद ईश्वर वेद-ज्ञान न देता तो मनुष्य पशुवत् ही रह जाता। इसीलिए मानव को सही रूप में मानव बनाने के लिए ईश्वर ने वेद ज्ञान दिया और इसीलिए महर्षि ने वेदों को ईश्वरीय ज्ञान बताया।

२. वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है-महर्षि दयानन्द का मानना है कि वेदों में सब सत्य विद्याएँ हैं। पहले के वेद-भाष्यकार वेदों को केवल कर्मकाण्ड के ही ग्रन्थ मानते थे और वेदों को अनादि न मानकर उनमें इतिहास और हिंसा का वर्णन है, ऐसा मानते थे, परन्तु महर्षि ने बताया कि जब वेद-ज्ञान सम्पूर्ण मानव-मात्र के लिए उनके पूरे जीवन को सुचारू रूप में चलने के लिए ईश्वर ने बनाए हैं तो मनुष्य तो सब विद्याओं को जानने के बाद ही अपने जीवन को उत्तम व श्रेष्ठ बना सकता है और मोक्ष प्राप्ति के लिए अग्रसर हो सकता है। इसलिए ईश्वर ने वेदों में सब सत्य विद्याओं का वर्णन किया है तभी मनुष्य उनको पढ़कर और उनके अनुसार चलकर अपने व दूसरों के जीवन को उन्नत कर सकता है और मोक्ष प्राप्त कर सकता है।

३. वेदों में मानव के लिए जितना ज्ञान आवश्यक है उतना पूर्ण ज्ञान है-कई विद्वान कह देते हैं कि वेदों में ईश्वर का सम्पूर्ण ज्ञान है। यह कहना उनका गलत है कारण ईश्वर ने वेद मनुष्यों के लिए ही बनाये है कारण मनुष्य ही भोग व कर्म योनि है, वही अपने किये कर्मों के अनुसार मोक्ष को प्राप्त करता है इसलिए वेद केवल मनुष्यों के लिए ही है। पशु-पक्षी तथा अन्य जीव तो केवल भोग योनि है, वह तो अपने पूरे जीवन में भोग करके दूसरी किसी भी योनि में जाता है, वह अपनी योनि से सीधा मोक्ष को प्राप्त नहीं कर सकता इसलिए उसको वेद-ज्ञान की कोई आवश्यकता नहीं। वेद ज्ञान केवल मानव-मात्र के लिए है। मानव जिन-जिन कर्मों को करने से मोक्ष प्राप्त कर सकता है, वही कर्म करने का उल्लेख वेदों में है। इससे अधिक ज्ञान वेदों में देने के लिए ईश्वर को आवश्यकता भी नहीं। ईश्वर के पास तो अनन्त ज्ञान है जिससे वह पूरी सृष्टि चलाता है। परन्तु वेदों में उतना ही ज्ञान दिया है जितना मनुष्य को आवश्यक है। जैसे कोई शिक्षक एम.ए. या बी.ए. पास है, उसके पास तो एम.ए., बी.ए. का ज्ञान है। यदि वह शिक्षक दसवीं क्लास को पढ़ाता है तो वह विद्यार्थियों को दसवीं क्लास की पुस्तकों का ज्ञान ही करवायेगा। इसी प्रकार ईश्वर ने मनुष्य की आवश्यकता का ज्ञान ही वेदों में दिया है। इसलिए वेद-ज्ञान मनुष्यों के लिए पूर्ण है न कि ईश्वर के लिए।

४. वेद ज्ञान मनुष्यों के लिए संविधान है-जिस प्रकार किसी राष्ट्र का कोई एक संविधान होता है, उसी के अनुसार चलने से राष्ट्र उन्नत व समृद्धशाली बनता है, इसी प्रकार ईश्वर ने वेद-ज्ञान मनुष्यों को संविधान के रूप में दिया, जिनको पढ़कर और उनको जीवन में उतार पर मनुष्य उन्नति करता हुआ मोक्ष को प्राप्त कर सकता है, जो जीव का अन्तिम लक्ष्य है। इसी को पाने के लिए जीव को ईश्वर धरती पर भेजता है।

५. वेदानुसार चलने से ही विश्व का कल्याण है-जब तक विश्व में वेदों का पठन-पाठन था, तब तक विश्व में परस्पर प्रेम था और सब लोग आनन्द व सुख से जीवनयापन कर रहे थे। महाभारत से करीब एक हजार वर्ष पहले वेदों का पठन-पाठन प्राय: लुप्त हो गया तभी से विश्व में अज्ञान, अन्धविश्वास व पाखण्ड का बोलबाला हो गया कारण महाभारत के युद्ध में अधिकतर बलवान, बुद्धिमान, विद्वान, आचार्य व योद्धा मारे गये जिससे स्वार्थी और कम पढ़े लिखे ब्राह्मणों व पण्डितों का आधिपत्य हो गया। उन्होंने अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए अनेकों मत-मतान्तर चला दिये जिससे विश्व में

(शेष पृष्ठ 6 पर)

सम्पादकीय

23 मार्च को बलिदान दिवस पर विशेष--------

अमर शहीद भगत सिंह, सुखदेव और राजगुरू

सत्यार्थ प्रकाश के ग्यारहवें समुल्लास में महर्षि दयानन्द अपने देश की महत्ता का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि आर्यावर्त्त देश ऐसा देश है जिसके सदृश भूगोल में दूसरा कोई देश नहीं है। इसीलिए इस भूमि का नाम सुवर्णभूमि है क्योंकि यही सुवर्णादि रत्नों को उत्त्पन्न करती है। वे लिखते हैं कि आर्यावर्त देश ही सच्चा पारसमणि है जिसको छूने से लोहेरूपी दरिद्र विदेशी सुवर्ण अर्थात् धनाढ्य हो जाते हैं।

महर्षि दयानन्द लिखते हैं कि स्वायम्भुव राजा से लेकर पाण्ड़वपर्यन्त आर्यों का चक्रवर्ती राज्य रहा। तत्पश्चात आपस के विरोध से लड़ कर नष्ट हो गये। आर्यों के आलस्य और प्रमाद के कारण हमारे देश का पतन हुआ। पहले मुगलों ने हमारे देश पर शासन किया। मुगलों के पश्चात अंग्रेजों ने अपना शासन किया। ऐसी विपरीत परिस्थितियों में युगप्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द जी महाराज की विचारधारा से प्रेरित होकर अनेक नवयुवकों ने अपने देश को स्वतन्त्र कराने का प्रयास किया क्योंकि महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने कहा है कि कोई कितना भी करे परन्तु अच्छे से अच्छा विदेशी राज्य बुरे से बुरे स्वदेशी राज्य की बराबरी नहीं कर सकता।

महर्षि दयानन्द की राष्ट्रवादी विचारधारा से प्रभावित होकर अनेकों नवयुवकों ने स्वाधीनता संग्राम रूपी महायज्ञ में अपने प्राणों की आहुति दी। महर्षि दयानन्द के विचारों से युवाओं में एक क्रान्ति का उद्घोष हुआ। उनके द्वारा लिखित सत्यार्थ प्रकाश को पढ़कर अनेक नवयुवकों का हृदय परिवर्तन हुआ और देश के लिए अपना सर्वस्व अर्पण करने के लिए तैयार हो गये। इन वीरों ने हंसते-हंसते फांसी का फंदा अपने गले में डाल लिया और मातृभूमि की स्वतन्त्रता के यज्ञ में अपने जीवन को अर्पण कर दिया।

भारत माता के सच्चे सपूतों ने मृत्यु का आलिंगन करते हुए अपने जीवन को राष्ट्र के लिए भेंट कर दिया। संसार में अधिक संख्या उन लोगों की है जो प्रत्येक क्षण अपनी जीवन अवधि को बढ़ाने तथा अपने सुख और सम्पत्ति के साधनों को इकट्ठा करने में लगे रहते हैं। बहुत कम ऐसे हुआ करते हैं जो मृत्यु में जीवन की तलाश किया करते हैं। भारत के क्रान्तिवीर ऐसे ही श्रेष्ठ व्यक्तियों में से थे। वे निरन्तर मृत्यु में जीवन खोजा करते थे और हम उनके पवित्र जीवन का अनुसरण करते हुए यह स्पष्ट अनुभव करते हैं कि उन्हें मृत्यु कभी भी भयप्रद नहीं दिखाई दी।

भारत माता के बन्धनों को तोड़ने वाले और उसे स्वतन्त्र देखने की चाह रखने वाले इन नर वीरों में से किस को अधिक बलिदानी, त्यागी और तपस्वी कहा जाए यह विकट समस्या है। भरी जवानी में प्राणों का, अपने माता-पिता का, संसार की मान प्रतिष्ठा का और धन-वैभव का त्याग तो कोई तपस्वी और त्यागी भी नहीं कर सकता है। परन्तु अपना सर्वस्व त्याग करने वाले इन वीरों की निराली शान यह है कि इन्होंने जहां अपने लिए कुछ भी अपेक्षा नहीं की वहीं जननी जन्मभूमि और भारत माता के लिए सब कुछ त्याग करना चाहते थे।

आज देश आजाद है परन्तु यह आजादी हमने कैसे प्राप्त की इसका इतिहास रोंगटे खड़े कर देने वाला है। आज का भारतीय नौजवान इन गुलामी के दिनों का अनुमान नहीं लगा सकता जिन गुलामी की जंजीरों को तोड़ने के लिए भारत मां के अमर सपूतों ने हंसते हंसते फांसी के फंदों को चूमा था।

23 मार्च 1931 का दिन वह भारतवासी कभी नहीं भुला सकेंगे जब महान क्रान्तिकारी भगत सिंह, राजगुरू, और सुखदेव इन तीनों को अंग्रेज सरकार ने लाहौर की सैंट्रल जेल में फांसी पर लटका दिया था। साहसी वीर युवकों ने जल्लाद को गले में फंदा नहीं डालने दिया और स्वयं निर्भीक होकर वन्दे मातरम् का जयघोष करते हुए उसे अपने गले में डाला। सरदार भगत सिंह का जन्म एक आर्य परिवार में हुआ था और उन्हें देश भक्ति के संस्कार बचपन में ही मिले थे। भगत सिंह के उपर बचपन में ही इन संस्कारों का प्रभाव पडा और वे भी एक महान देशभक्त बनें। दादा ने बड़े प्यार से भगत सिंह का यज्ञोपवीत संस्कार वैदिक रीति से करवाया था। इन तीन शहीदों में दो पंजाब के थे, भगत सिंह तथा सुखदेव। श्री सुखदेव का जन्म 16 मई 1907 को लुधियाना में हुआ था।

इनके पिता का नाम श्री राम लाल थापर था। सुखदेव के पिता का देहावसान 1910 में लायलपुर में हो गया जहां वह अपना कारोबार किया करते थे। इस प्रकार सुखदेव का पालन पोषण इनके ताया श्री चिन्तराम जी द्वारा हुआ। श्री चिन्तराम जी एक महान देशभक्त थे और वैदिक धर्म के अनुयायी थे। वह घर के सभी बच्चों को राष्ट्र प्रेम और देशभक्ति की कहानियां सुनाया करते थे। इन कहानियों को सुखदेव बड़े मनोयोग से सुना करता था और सोचा करता था कि बडा होकर मैं भी वीर सिपाही और देशभक्त बनूंगा। सुखदेव सबसे अधिक प्रभावित झांसी की रानी लक्ष्मीबाई से थे।

राजगुरू महाराष्ट्र के रहने वाले थे इनका जन्म पूना में 1909 में हुआ था। वह छत्रवंशी राजगुरू परिवार के महाराष्ट्रीय ब्राह्मण थे। इनका पूरा नाम शिवराम हरिराज गुरू था। किन्हीं विपरीत परिस्थितियों में वे बचपन से ही घर त्याग कर बनारस आ गए थे और फिर उनके जीवन का अधिकांश समय काशी में ही संस्कृत पढने, लाठी और कुश्ती आदि सीखने में बीता था। वह हिन्दी, गुजराती, मराठी और संस्कृत अच्छी तरह जानते थे। आगे चलकर वे भी क्रान्तिकारी दल के सदस्य बन गए। राजगुरू बहुत साहसी युवक थे और प्रत्येक कार्य को करने के लिए सबसे आगे रहते थे। कोई भी संगठन का कार्य हो वे उसे अपने उपर ले लेते थे। सरदार भगत सिंह हर काम में राजगुरू को अपने साथ ले जाने का आग्रह करते थे। उन्होंने केवल एक ही काम ऐसा किया जिसमें राजगुरू उनके साथ नहीं थे वह था असैंबली में बम फैंकना।

23 मार्च इन तीनों शहीदों का बलिदान दिवस है। इन वीरों को याद करते हुए हमें भी देश सेवा का व्रत लेना चाहिए। हमें अपनी युवा पीढ़ी को अपने महान् बलिदानियों के जीवन चरित्र से अवगत कराना चाहिए। महापुरूषों के जीवन चरित्र का वर्णन करते हुए युवा पीढ़ी को जागरूक करने का प्रयास करें कि किस प्रकार इन बलिदानियों ने अपने देश के लिए अपने जीवन को बलिदान किया था। देशभक्तों और क्रान्तिकारियों के जीवनियां बच्चों में बाँटे। इन वीरों तथा देशभक्तों के जीवन का अनुसरण करके ही बच्चे राष्ट्र भक्त बन सकते हैं। आज की युवा पीढी को बचाने के लिए, उन्हें राष्ट्र का भविष्य बनाने के लिए हमें प्रयास करने होंगे। समाज में फैली हुई बुराइयों, कुरीतियों और भ्रष्टाचार को दूर करने का संकल्प करें। अपने राष्ट्र को उन्नत करने का संकल्प लें। यह क्रान्ति की ज्वाला इसी प्रकार जलती रहे। बलिदान की परम्परा चलती रहनी चाहिए। ऐसा निश्चय और संकल्प करते हुए हम इन बलिदानियों को याद करें।

प्रेम भारद्वाज

संपादक एवं सभा महामन्त्री

कर्म फल सिद्धान्त और सृष्टि

ले.-रामबाबू आर्य (मंत्री) आर्य समाज, हिण्डौन सिटी-322230

(गतांक से आगे)

मानव शरीर शुद्धि सात्विक कर्मों को करने से मिलता है अर्थात् बुद्धि का सदुपयोग करके ही यह विराट सी आकृति का शरीर प्राप्त हुआ है। इसलिए इसके प्रत्येक अंग को विराट के प्रत्येक अंग से सहयोग मिला है। किन्तु कुछ मनुष्य ऐसे भी हैं जिन्होंने अपनी बुद्धि-विवेक से काम न लेकर अन्ध-परम्परा के हिसाब से कुछ न कुछ करते रहे हैं तो जो बुद्धि का मुख्य स्थान सिर है, जो द्युलोक की ओर था, उसका स्थान क्षितिज की ओर आड़ा कर दिया है और वे सब पशु बना दिये गये हैं। क्या बुलबुल, क्या चिड़िया, क्या शुतुरमुर्ग, क्या मछली से लेकर मगर तक, क्या हाथी से लेकर बीफ तक, वनमानुष, बन्दर अथवा गोरिल्ला जितने भी पशु-पक्षी हैं, इनके किसी के भी पर आकाश की ओर नहीं हैं। ये सभी चलते-फिरते हैं अर्थात् इनकी कर्मेन्द्रियों का पतन (ह्रास) नहीं हुआ है। इसका यह कारण समझ आता है कि इन्होंने अनाचार तो किया, किन्तु जानबूझकर नहीं। लेकिन जिन मनुष्यों ने प्रमाद, अभिमान से या अपनी इच्छा से जानबूझकर दुष्कर्म किए हैं उनकी ज्ञानेन्द्रियों के साथ-साथ कर्मेन्द्रियाँ भी छीन ली गई हैं और उनके ज्ञानेन्द्रिय के प्रमुख स्थान सिर को उल्टा कर जमीन पर गाड़ दिया गया और उन्हें वृक्ष बना दिया गया। इसलिए ना तो वे ज्ञान रखते हैं और ना ही वे चल फिर सकते हैं। सांख्य दर्शन में त्रिगुणात्मक सृष्टि के विषय में महर्षि कपिल ने कहा है-

ऊर्ध्व सत्त्व विशाला।।48।। अर्थात् सतोगुणी कर्म करने वाले ऊपर की ओर जाते हैं। **मध्येरोच विशाला।।50।।** रजोगुण वाले मध्य की ओर जाते हैं। **तमो विशाला मूलतः।।49।।** और तमोगुणी नीचे की ओर जाते हैं।

इस प्रकार एक योनि से दूसरी योनि में जाने का यह चक्र चलता रहता है, किन्तु **आब्रह्मस्तम्बपर्यन्त तत्कृते सृष्टिराविवेकात्।।46।।** अर्थात् मनुष्य जाति से लेकर स्तम्ब जाति अर्थात् वृक्षों तक के चक्कर को विवेक द्वारा छुड़ाया जा सकता है। उक्त सूत्रों से यह स्पष्ट है कि सतोगुणी मनुष्य बड़े शरीर वाले, रजोगुणी पशु आड़े शरीर वाले तथा तमोगुणी वृक्ष उलटे शरीर वाले हैं। इन सबका अपने-अपने कर्मों के साथ सृष्टि से सम्बन्ध है। यह सम्बन्ध अनुकूल और प्रतिकूल दोनों प्रकार कर्मों के आधार पर है।

चेतन सृष्टि का जिस प्रकार जड़ सृष्टि के साथ सम्बन्ध है, उसी प्रकार का सम्बन्ध इनका आपस में भी है। जीवों के कर्मानुसार परमात्मा प्राणियों के शरीर बनाता है और दण्ड भोग के साथ-साथ दुःख देने वाले से दुःख प्राप्ति वाले को प्रतिफल भी दिलवाता है, जिसे हम ऋण चुकाना कहते हैं। अनाचारी और अत्याचारी की ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों में न्यूनता करके वह (परमेश्वर) उनको इस प्रकार का बना देता है कि वे आसानी से उत्कृष्टेन्द्रियाँ (जिनसे अनाचार हुआ है) प्राणियों के काबू में आ जाते हैं और उनका भोग्य बनकर अपना ऋण चुकाते हैं। इससे यह स्वतः ही सिद्ध होता है कि परमात्मा प्रथम भोग्य बनाता है, फिर भोक्ता को जन्म देता है। इसीलिए आदि सृष्टि में पहले वृक्ष, फिर पशु और अन्त में मनुष्य हुए।

तात्पर्य यह हुआ कि इस जन्म में जो पशु तथा वृक्ष बने हैं, उन्होंने पूर्व जन्म में जब इनका जन्म मनुष्य योनि में था तब अपने मनुष्य शरीर द्वारा इन्होंने अन्य मनुष्यों को हानि पहुँचाई है, इसलिए ये मनुष्यों की अपेक्षा इन्द्रियों की न्यूनता के कारण उनके काबू में आकर अपना ऋण चुका रहे हैं तथा वर्तमान के वृक्षों ने अपने पूर्व जन्म की मनुष्य योनि में मनुष्य तथा पशुओं दोनों को हानि पहुँचाई है। इसलिए वे पशुओं तथा मनुष्यों के काबू में आकर अपना ऋण चुका रहे हैं। परन्तु वर्तमान में पशु जो पूर्व जन्म में वृक्ष शरीरधारी था, उसने उस समय के पशुओं को कोई हानि नहीं पहुँचाई, इसलिए वे इस जन्म में वृक्षों को कुछ नहीं देते, अपितु लेते हैं। वृक्ष और पशु मनुष्यों के ऋणी हैं, परन्तु मनुष्य इन दोनों में से किसी का भी ऋणी नहीं है। पशु मनुष्यों के तो ऋणी हैं, परन्तु वृक्षों के नहीं। परन्तु वृक्ष, पशुओं तथा मनुष्यों दोनों के ऋणी हैं और उनका ऋणी कोई नहीं है। इस प्रकार सब प्राणी बिना किसी रोक-टोक के अपना ऋण चुका रहे हैं।

गाय-भैंस-बकरी-भेड़ दूध देकर, भेड़, ऊँट वस्त्रों के लिए ऊन देकर, घोड़ा, गधा, बैल, खच्चर, हाथी आदि सवारी का बोझ ढोकर, कुत्ता चौकीदार या प्रहरी बनकर पहरा देकर, मनुष्य का ऋण चुका रहा है। उसी प्रकार सिंह, व्याघ्र, सियार, गिद्ध आदि मांसाहारी प्राणी मृतक शरीरों का मांस खाकर सफाई करके सेवा दे रहे हैं। सुअर, मुर्गा, चील, कौवे आदि भी मल और सड़े मांस को खाकर पृथिवी को पवित्र बनाकर मनुष्य की सेवा कर रहे हैं। मछलियाँ और अन्य जीव-जन्तु पानी को स्वच्छ कर रहे हैं। वायु में उड़ने वाले पक्षी और कृमि, वायु के मल को खा जाते हैं। सर्प, बिच्छू और ऐसे ही जहरीले प्राणी वायु के विष को खा जाते हैं।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी पशु-पक्षी, कीड़े आदि भी मनुष्य की बहुत सेवा करते हैं। कुत्ता भूकम्प आने से पूर्व की सूचना भौंकने से तथा जहाँ भूकम्प आता हो वहाँ से भाग जाता है। भेड़ उस स्थान पर नहीं बैठती जहाँ पूर्व में कुआँ था, और बाद में वह भर दिया गया हो। इससे भूगर्भ सम्बन्धी अनेक जानकारियाँ मिलती हैं। जोकि आने वाले बड़े-बड़े तूफानों को बतला देती है। पानी के भरे गिलास में यदि जोक डाल दी जाये तो यदि तूफान आने वाला है तो वह गिलास के पेन्दे में, यदि नहीं आवेगा तो गिलास के पानी की ऊपरी सतह पर और यदि तूफान अभी दूर है लेकिन आने वाला है तो गिलास के मध्य में फड़फड़ाती रहेगी। जोक खराब खून को निकालने का काम भी करती है। अग्निप्रपात, भूकम्प, तूफान और वर्षा के आने के पूर्व ही चीटियाँ अपने अण्डों को लेकर भाग जाती हैं। मण्डूक (मेंढक) एक तालाब के पानी सूख जाने पर वह उसे छोड़कर दूसरे ऐसे तालाब में स्वयं ही रास्ता देखकर चला जाता है। पहले कबूतर पक्षी डाक व तार का काम करते थे।

पशुओं, कीड़े-मकोड़ों की तरह वृक्ष भी फल-फूल, अन्न, औषधियाँ देकर तथा वर्षा आदि अनेक प्रकार की अमूल्य साधनों को देकर मनुष्य की सेवा करते हैं। तात्पर्य यह है कि हीन अंगों के प्राणी, उत्तम अंगों वाले प्राणियों की सेवा कर अपने ऋण को उतारते हैं।

एक प्रतिभावान पुरुष के प्रभाव में भी अनेक साधारण बुद्धि के व्यक्ति आ जाते हैं और वे उसका आदर, सत्कार स्वभाव से ही करने लगते हैं। सिंह भी अपने मांस को अन्य मांसाहारी पशुओं को दे देते हैं। दीमक घर बना करके सर्प को देती है। कौआ कोयल के बच्चों को पालता है। इस प्रकार संसार में सर्पों और कोयलों का जीवन चलता है। घोड़ों के असाध्य रोग बन्दरों के सहवास से अच्छे होते हैं। बड़े-बड़े राजाओं या प्रशासकों के घुड़साल में बन्दर भी रहते थे। इसी प्रकार वृक्षों में भी ऐसा पाया जाता है। सभी लताएँ वृक्षों के सहारे ही रहती हैं। नागबेल जैसी लताओं का पालन तो दूसरे वृक्ष पर ही होता है। तात्पर्य यह है कि समस्त अवान्तर योनियाँ परस्पर सहाय-सहायक होकर अपने उच्च विभाग के प्राणियों का ऋण चुकाकर सेवा करती हैं। अतः सृष्टि की सारी योनियाँ सार्थक हैं, निरर्थक कोई भी नहीं।

चेतन सृष्टि सुसंगठित बनाकर तथा उसका जड़ सृष्टि के साथ सम्बन्ध जोड़ने से प्रतीत होता है कि संसार का बहुत बड़ा यन्त्र है। सूर्य, चन्द्र, पृथिवी, वायु और जल आदि अचेतन (जड़) सृष्टि का ढाँचा है, और इस ढाँचे से जुड़ी हुई समस्त चेतन योनियाँ इसके संश्लिष्ट पुर्जे हैं। सबसे बड़ी बात उस नियन्ता की है जिसने कोई भी पूर्जा व्यर्थ या अकारण नहीं लगाया है। अतः सृष्टि की इस चेतन सृष्टि या अचेतन सृष्टि का हमें बड़े सोच-समझकर ही उपयोग करना चाहिए, नहीं तो प्राकृतिक सन्तुलन नष्ट हो जायेगा।

उपरोक्त बातों से यह स्पष्ट सा लगने लगा है कि सृष्टि को अनियमित, अस्वाभाविक और क्षुभित करने वाला मनुष्य ही है। मनुष्य के उत्पन्न होने से पूर्व सृष्टि में कोई अनियमितता नहीं थी, कोई अस्वभाविकता नहीं थी, कोई पाप भी नहीं था, सभी प्राणी सृष्टि के नियमों से बँधे हुए अपने-अपने नियमित कार्य करते थे, कोई किसी को दुःख नहीं देता था। किन्तु मनुष्य के उत्पन्न होते ही चूँकि वह ज्ञान स्वातन्त्रय प्राणी है, उसने अस्वभाविकता खड़ी कर दी। वह अपने ज्ञान द्वारा सृष्टि के नियमों को भंग करने लगा और इससे समस्त प्राणी दुःखी होने लगे। यह बात और है कि वह मानने लगा कि मनुष्य शरीर से भिन्न योनियों के प्राणी भी पूर्व जन्म में मनुष्य ही थे लेकिन अपने कर्मों के कारण ही सृष्टि नियमों के विरूद्ध किये गये इनके कार्यों से ही इन्हें इनके फल, भोगादि से ये शरीर प्राप्त हुए हैं। इन शरीरों की बनावट में कोई विशेष अन्तर नहीं है। अन्तर केवल यह है कि मनुष्य ने शरीर के जिस अंग का दुरुपयोग किया है वह अंग मन्द हो गया है। अब ये खड़े शरीर वाले न रहकर आड़े और उल्टे शरीर वाले हो गये हैं।

मोक्ष का सम्बन्ध रखने वाले मौलिक सिद्धान्तों पर ध्यान रखते हैं। मननशील भी रहते हैं उनके मन में यह बात स्थिर हो गई है कि मनुष्य को अपने दुष्कर्मों के कारण ही पशु-पक्षी-वृक्ष आदि की योनियाँ प्राप्त

(शेष पृष्ठ 7 पर)

''जन्म-मरण वा पुनर्जन्म और मोक्ष ही जीवात्मा की मध्यम एवं उत्तम गतियां''

ले.-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

हम मनुष्य नाम के प्राणी हैं। मनुष्य हमें इसलिये कहा जाता है कि हम मनन कर सकते हैं व करते भी हैं। मनन का अर्थ होता है किसी विषय का चिन्तन एवं सत्य व असत्य की परीक्षा व निर्णय लेना। परमात्मा ने हम सबको ज्ञान व कर्मेन्द्रियों सहित अन्त:करण चतुष्टय मन, बुद्धि, चित्त एवं अहंकार आदि करण दिये हैं। इनका सदुपयोग करना हमारा कर्तव्य है। जिस प्रकार हम आंख से देखते व कान से सुनते हैं, जिहवा से रस का ज्ञान प्राप्त करते तथा नासिका से सूंघते है, त्वचा से स्पर्श का अनुभव करते हैं, उसी प्रकार से हमें कर्मेन्द्रियों से सद्कर्म करने चाहियें तथा अपने अन्त:करण चतुष्टय का भी सदुपयोग करना चाहिये। जो मनुष्य इन सब ईश्वरीय दोनों का सदुपयोग करते हैं वह मानव से महामानव, ऋषि, मुनि, योगी, ध्यानी, ज्ञानी, वीर, धीर, क्षमाशील, सन्तोषी, ब्रह्मचारी, मार्गदर्शक, पथप्रदर्शक, साधु, संन्यासी, राजा, आचार्य आदि बन जाते हैं। अन्य लोग मनुष्य होकर भी मानवेतर पशु समान हीन जीवन व्यतीत करते हैं। ईश्वर ने तो सभी आत्माओं को उनके कर्मानुसार शरीर, रूप, स्वास्थ्य आदि अनेक सुविधायें प्रदान कर रखी हैं और इस जन्म में पुरुषार्थ करने पर भी वह हमारी अनेक कामनाओं को सफल व सिद्ध करता है।

मनुष्य का जन्म जीवात्मा का जन्म है और इसकी मृत्यु आत्मा की मृत्यु होती है। आत्मा जन्म-मरण धर्म है। चेतन व अल्पज्ञ होने के कारण यह परिस्थितियों के अनुसार शुभ व अशुभ दोनों प्रकार के कर्म करता है। कर्मों से आत्मा बन्धन में पड़ता है जिसका फल इसको भोगना होता है। इस फल भोग के लिये इसका मनुष्य व अन्य योनियों में जन्म होता है। मनुष्य का जन्म मनुष्य योनि में हो या अन्य पशु पक्षी आदि निम्न योनियों में, सभी योनियों में आत्मा को अनेक प्रकार के दु:ख भोगने होते हैं। बुद्धिमान व ज्ञानी मनुष्य वही होता है जो इन दु:खों का निवारण करने के उपाय व साधनों को जानने का प्रयत्न करता है। महापुरुषों के जीवन एवं वेद आदि शास्त्रों के अध्ययन से यह निष्कर्ष सामने आता है कि दु:खों की निवृत्ति के लिए मनुष्य का सृष्टिकर्ता ईश्वर को जानना अनिवार्य है। ईश्वर को जान लेने के बाद मनुष्य का कर्तव्य होता है कि वह ईश्वर की उपासना से सद्ज्ञान को प्राप्त हो जिससे वह जन्म व मरण के चक्र से मुक्त हो सके। योग, ध्यान व समाधि से मनुष्य मुक्ति में प्रविष्ट होता है। साधना जितनी अधिक होगी और मनुष्य जितना अधिक लोभ व मोह आदि से रहित होकर परोपकार व परहित के काम करेगा उससे वह ईश्वर व मोक्ष के निकट पहुंचता जाता है। जिस प्रकार हमें अपना आवासीय भवन बनवाने व कार आदि खरीदने के लिये उसके मूल्य के बराबर धनराशि जमा करनी पड़ता है तथा इसके लिये पुरुषार्थ करना पड़ता है, इसी प्रकार जन्म व मरण से छूटकर मुक्ति को प्राप्त करने के लिये भी पूर्व कर्मों के फलों को भोगकर नये कर्मों का बन्धन न हो, इस पर ध्यान देना होता है। पुण्य कर्म तो मनुष्य को करने ही चाहियें परन्तु मुमुक्षु के लिये पाप व अशुभ कर्मों का सर्वथा त्याग करना होता है। इसके लिये शास्त्रों का अध्ययन व विवेक बुद्धि से कार्य करना होता है। महर्षि दयानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द, पं. लेखराम, पं. गुरुदत्त विद्यार्थी, महात्मा हंसराज, स्वामी दर्शनानन्द जी आदि अनेक महापुरुषों के जीवन चरित्र हमारा मार्ग दर्शन कर सकते हैं। इनकी सहायता लेकर इनकी प्रेरणा से हमें सद्कर्मों को करके मुक्ति की प्राप्ति में प्रविष्ट होना चाहिये।

किस आत्मा का जन्म होता है और किसका मोक्ष होता है, इस प्रश्न का उत्तर है कि जिस मनुष्य के ज्ञान व कर्म मोक्ष की अर्हता से कम होते हैं उन सबका पुनर्जन्म होता है। जीवात्मा, परमात्मा तथा प्रकृति नित्य हैं, अत: यह क्रम अनादि काल से आरम्भ हुआ है और अनन्त काल तक इसी प्रकार से चलेगा। मनुष्य को ज्ञान व विवेक की प्राप्ति करनी चाहिये। यही मोक्ष प्राप्ति में सबसे अधिक सहयोगी होता हैं। ज्ञान व विवेक की प्राप्ति वेद एवं शास्त्रों के अध्ययन एवं उनके अनुकूल आचरण करने से प्राप्त होती है। इसके साथ सन्ध्योपासना तथा अग्निहोत्र आदि पंच महायज्ञ करने तथा वेद प्रचार का कार्य करना भी मोक्ष प्राप्ति में सहायक होता है। मोक्ष मिले न मिले, इसकी चिन्ता न कर मनुष्य को अपने ज्ञान की वृद्धि व अपने कर्म एवं आचरण को वेदसम्मत वं ऋषि व योगियों के जीवन के अनुकूल बनाना चाहिये। ऐसा करने से जीवात्मा का मृत्यु के पश्चात मनुष्य योनि में जन्म होना सम्भव होता है। मनुष्य योनि में अन्य योनियों से सुख की मात्रा अधिक होती है। अत: मोक्ष न मिलने की स्थिति में भी मनुष्य जीवन मिलना एक उपलब्धि ही कही जायेगी। मोक्ष में जीवात्मा के सभी दु:ख मोक्ष अवधि 31 नील 10 खरब 40 अरब वर्षों के लिये दूर व समाप्त हो जाते हैं। जीवात्मा जन्म व मरण के चक्र से इस अवधि के लिये छूट जाता है और ईश्वर के सान्निध्य में रहता हुआ आनन्द का भोग करता है। मोक्ष विषयक जानकारी के लिये ऋषि दयानन्द लिखित सत्यार्थप्रकाश का नौवां समुल्लास पढ़ना चाहिये। इसमें ऋषि दयानन्द ने मोक्ष के सभी पक्षों पर प्रकाश डाला है। इससे मोक्ष व स्वरूप व महत्व का ज्ञान होता है और मोक्ष के प्रति रुचि भी उत्पन्न हो सकती है।

एक शंका यह हो सकती है मोक्ष में जीवात्मा का मनुष्य के समान शरीर नहीं होता तो वह बिना शरीर के सुख वा आनन्द का भोग किस प्रकार से करता है। इसका उत्तर ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश में दिया है। वह कहते हैं कि मोक्ष में जीव के साथ उसके सत्यसंकल्प आदि स्वाभाविक शुद्ध गुण रहते हैं। जब वह सुनना चाहता है तब श्रोत्र, स्पर्श करना चाहता है तब त्वचा, देखने के संकल्प से चक्षु, स्वाद का अर्थ रसना, गन्ध के लिये घ्राण, संकल्प विकल्प करते समय मन, निश्चय करने के लिये बुद्धि, स्मरण करने के लिये चित्त और अहंकार के अर्थ अहंकाररूप अपनी स्वशक्ति के आधार रहकर इन्द्रियों के गोलक के द्वारा जीव स्वकार्य करता है उसी प्रकार अपनी शक्ति से मुक्ति में जीव सब आनन्द भोग लेता है। मोक्ष में जीवात्मा चौबीस प्रकार की सामर्थ्य व शक्तियों से युक्त रहता है। ये सामर्थ्य वा शक्तियां हैं बल, पराक्रम, आकर्षण, प्रेरणा, गति, भीषण, विवेचन, क्रिया, उत्साह, स्मरण, निश्चय, इच्छा, प्रेम, द्वेष, संयोग, विभाग, संयोजक, विभाजक, श्रवण, स्पर्शन, स्वादन और गन्ध ग्रहण तथा ज्ञान। अपनी इन्हीं शक्तियों से जीव मुक्तावस्था में भी आनन्द का भोग करता है।

एक प्रश्न व शंका यह भी हो सकती है कि जीव को सुख भोगने के लिये शरीर वा ज्ञान एवं कर्म इन्द्रियों की आवश्यकता होती है। अत: मोक्ष अवस्था में जीव बिना शरीर व इन्द्रियों के आनन्द का भोग नहीं कर सकता। इसका उत्तर ऋषि के अनुसार यह है कि जो जीवात्मा अपनी बुद्धि और आत्मा में स्थित सत्य ज्ञान और अनन्त आनन्दस्वरूप परमात्मा को जानता है। वह उस व्यापकरूप ब्रह्म में स्थित हो के उस 'विपश्चित्' अनन्तविद्यायुक्त ब्रह्म के साथ कामों (इच्छाओं वा कामनाओं) को प्राप्त होता है अर्थात् जिस-जिस आनन्द की कामना करता है उस-उस आनन्द को प्राप्त होता है। इसी को मुक्ति कहते हैं। ऋषि बताते हैं कि जैसे सांसारिक सुख शरीर के आधार से भोगता है वैसे परमेश्वर के आधार मुक्ति के आनन्द को जीवात्मा भोगता है। वह मुक्त जीव अनन्त व्यापक ब्रह्म में स्वच्छन्द घूमता, शुद्ध ज्ञान से सब सृष्टि को देखता, अन्य मुक्तों के साथ मिलता, सृष्टिविद्या को क्रम से देखता हुआ सब लोकलोकान्तरों में अर्थात् जितने ये लोक दीखते हैं, और नहीं दीखते, उन सब में घूमता है। वह सब पदार्थों को जो कि उस के ज्ञान के आगे हैं सब को देखता है। जीव में जितना ज्ञान अधिक होता है उसको उतना ही आनन्द अधिक होता है। मुक्ति में जीवात्मा निर्मल होने से वह पूर्ण ज्ञानी होकर उस को सब सन्निहित पदार्थों का भान यथावत् होता है।

ऋषि दयानन्द ने बताया है कि जीवात्मा की मोक्ष अवस्था सुख विशेष अवस्था होने के कारण से स्वर्ग और विषय तृष्णा में फंस कर दु:ख विशेष भोग करना नरक कहलाता है। 'स्व:' सुख का नाम है। 'स्व: सुखं गच्छति यस्मिन् स स्वर्ग:' 'अतो विपरीतो दु:खभोगो नरक इति' अर्थात् जो सांसारिक सुख है वह सामान्य स्वर्ग और जो परमेश्वर की प्राप्ति से आनन्द है वही विशेष स्वर्ग अर्थात् मोक्ष कहलाता है। मनुष्य का कर्तव्य है कि वह ईश्वर, जीवात्मा तथा प्रकृति को जाने और जीवात्मा के कर्मफल बन्धन को जानकर उससे होने वाले दु:खों की निवृत्ति के उपाय करे। हम यह अनुभव करते हैं कि मनुष्य को सुख भले ही कम मिलें परन्तु दु:ख नहीं होना चाहिये। मनुष्य को जन्म लेने में दस माह तक माता के गर्भ में अन्धेरे में उलटा लटकना पड़ता है। मल-मूत्र के मार्ग से वह इस संसार में आता है। इसके बाद भी उसे अनेक प्रकार के शारीरिक एवं मानसिक दु:खों को झेलना पड़ता है। अत: मनुष्य योनि में भी दु:खों की कोई कमी नहीं है। अत: दु:खों से बचने का एकमात्र उपाय मोक्ष ही बचता है। ऋषि की यह महती कृपा हम सब पर है कि उन्होंने दु:खों की निवृति के साधनों सहित मोक्ष का स्वरूप हमें बताया है। धन्य है ऋषि दयानन्द। संसार के मनुष्य कभी उनके ऋणों से उऋण नहीं हो सकते। उन्होंने न केवल अपने समय के मनुष्यों पर उपकार किये थे अपितु पशु-पक्षियों आदि पर अहिंसा वा बलिवैश्वदेवयज्ञ का सन्देश देकर उन पर भी उपकार किये थे। भावी पीढ़ियां भी उनके उपकार से उपकृत हैं। हमें वेदपथ पर चलना है और संसार का उपकार करना है। इसी में हमारा हित एवं कल्याण है।

पृष्ठ 2 का शेष-''महर्षि जी ने धर्म के सच्च...

अज्ञान, अन्धविश्वास व पाखण्ड इतना बढ़ गया जिससे विश्व दिशाहीन हो गया। ईश्वर की असीम कृपा से सन् १८२५ में देव दयानन्द का टंकारा (गुजरात) में प्रादुर्भाव हुआ। उसको १४ वर्ष की आयु में शिव-रात्रि के दिन एक घटना से सद्ज्ञान हुआ और वह केवल २२ वर्ष की आयु में ही घर छोड़कर सच्चे शिव की खोज में चल पड़ा और करीब तीन साल तक अपने सद्गुरु स्वामी विरजानन्द के पास रह कर वेद तथा आर्ष ग्रन्थों का पूरा अध्ययन करके देश के चारों कोनों में घूम-घूम कर अनेकों दु:ख, कष्ट व अभावों को सहकर जीवन भर पूरी लगन के साथ वेदों का प्रचार किया जिससे वेदों की कुछ अंश में पुन: स्थापना हुई जिससे देश की उन्नति व समृद्धि पुन: आरम्भ हुई।

६. वेदों में अन्धविश्वास नहीं- वेदों में जादू टोना, गण्डा-डोरी, अपशकुन, फलित ज्योतिष आदि नहीं है। परन्तु इनके मानने के कारण ही देश में अन्धविश्वास व पाखण्ड अधिक बढ़े। दूसरा इनके बढ़ने का कारण मूर्त्तिपूजा और अवतारवाद है। महर्षि दयानन्द ने इन सबका डटकर विरोध किया। अवतारवाद के बारे में लोगों की मान्यता है कि जब धरती पर अन्याय बढ़ जाता है तब अन्याय को नष्ट करने के लिए ईश्वर किसी न किसी रूप में अवतार लेते हैं। जैसे रावण जैसे अन्यायी को मारने के लिए ईश्वर ने राम का अवतार लिया और कंस जैसे अन्यायी को मारने के लिए कृष्ण के रूप में ईश्वर ने अवतार लिया। महर्षि ने कहा कि ईश्वर सर्वव्यापी, निराकार, अजर व अमर है। अवतार लेने से ईश्वर को सर्वव्यापी न होकर एक स्थानव्यापी होना पड़ेगा। निराकार न रहकर साकार होना पड़ेगा और मनुष्य शरीर धारण करने के बाद बूढ़ा भी होगा और मृत्यु को भी प्राप्त होगा, इसलिए ईश्वर के ये चारों गुण नष्ट हो जायेंगे। इसलिए ईश्वर अवतार ले ही नहीं सकता, इस प्रकार अवतार मानना मिथ्या है। ऋषि ने कहा कि मूर्त्ति जड़ है, उसको किसी प्रकार का ज्ञान नहीं होता। जड़ चीज कभी किसी का भला या बुरा नहीं कर सकती, इसलिए मूर्त्ति पूजा करना समय को बर्बाद करना है। सामान्यजन कह देता है कि मूर्त्तिपूजा, मोक्ष प्राप्ति के लिए सीढ़ी है, परन्तु महर्षि कहते हैं कि मूर्त्तिपूजा मोक्ष प्राप्ति के लिए सीढ़ी नहीं खाई है, जिससे मनुष्य अन्धविश्वास में फंसकर नष्ट हो जाता है।

इस प्रकार महर्षि दयानन्द अपने जीवन भर ईंट पत्थर खाकर, जहर पीकर अनेक दु:खों, कष्टों व अभावों को सहते हुए दिन रात कठोर परिश्रम करके वेदज्ञान के प्रकाश को केवल भारत देश में ही नहीं बल्कि विश्व में प्रकाशित किया जिससे अज्ञान, अन्धविश्वास व पाखण्ड प्राय: समाप्त हो गया इसके लिए मानव-मात्र महर्षि दयानन्द का सदैव ऋणी बना रहेगा।

आर्य मर्यादा के ग्राहक महानुभावों की सेवा में

आर्य मर्यादा साप्ताहिक निरन्तर आपकी सेवा में पहुंच रही है। जिन आर्य मर्यादा के ग्राहकों ने अभी तक अपना वार्षिक शुल्क या पिछला शुल्क नहीं भेजा है उनसे विनम्र प्रार्थना है कि वह अपना वार्षिक शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। आर्य मर्यादा का वार्षिक शुल्क मात्र 100/- रुपये है और आजीवन सदस्यता शुल्क 1000/- रुपये है। इसलिये मेरी सभी ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि वह अपना शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। इसके साथ ही आर्य समाजों के पदाधिकारियों एवं सदस्यों से भी निवेदन है कि वह अधिक से अधिक आर्य मर्यादा के ग्राहक बनाने में सहयोग करें। आशा है आप का सहयोग हमें प्राप्त होगा। **-व्यवस्थापक आर्य मर्यादा**

यो जागार तमृच: कामयन्ते यो जागार तमु सामानि यन्ति।
यो जागार तमयं सोम आह तवाहमस्मि सख्ये न्योका:।।

-उ० ९.२.५.१

भावार्थ-जो पुरुषार्थी जागरणशील हैं, उन को ही ऋक् साम आदि वेद फलीभूत होते हैं और सोम आदि ओषधियाँ हाथ जोड़े उसके सामने खड़ी रहती हैं कि हम सब आपके लिए प्रस्तुत हैं। जो पुरुष निद्रा से बहुत प्यार करने वाले आलसी और उद्यमहीन हैं, उनको न तो वेदों का ज्ञान प्राप्त होता है न ओषधियां ही काम देती हैं। इसलिए हम सब को जागरणशील और उद्योगी बनना चाहिये।

पृष्ठ 8 का शेष-आर्य समाज, वेद मंदिर...

को फिर से विश्व गुरू बनाया जा सके। कार्यक्रम के अध्यक्ष श्री सरदारी लाल जी आर्य ने अपने अध्यक्षीय उद्बोधन देते हुए कहा कि आज हमें आर्य समाज का प्रचार-प्रसार करने की बहुत आवश्यकता है। हमें लोगों को घर-घर यज्ञ के लिए प्रेरित करना चाहिए। यज्ञ से ही कोरोना जैसे वायरस को समाप्त किया जा सकता है। यज्ञ में डाली जाने वाली ओषधियां अनेक रोगों को दूर करने वाली होती हैं। उन्होंने आर्य समाज संत नगर के सभी अधिकारियों को कार्यक्रम की सफलता के लिए बधाई एवं आशीर्वाद किया और इसी प्रकार मेहनत के साथ कार्य करने के लिए प्रेरित किया। मंच का संचालन आर्य समाज बस्ती बावा खेल के मन्त्री श्री निर्मल आर्य जी ने किया। आर्य समाज के प्रधान श्री जय चन्द जी ने आये हुए सभी गणमान्य अतिथियों को सम्मानित किया और सभी का धन्यवाद दिया। आर्य समाज के सभी अधिकारियों एवं कार्यकर्ताओं ने इस कार्यक्रम को सफल बनाने में अपना भरपूर योगदान दिया।

इस समारोह में विधायक श्री सुशील रिंकु, खादी बोर्ड डायरैक्टर मेजर सिंह, भाजपा नेता महेन्द्र भगत, पार्षद तरसेम लखोत्रा, ओम प्रकाश, सुरेन्द्र मोहन, सुदेश आर्य सभा मन्त्री, पूर्ण भगत, कमल किशोर, राज कुमार विशेष रूप से उपस्थित हुए।

-जय चन्द प्रधान आर्य समाज संत नगर जालन्धर

पृष्ठ 8 का शेष-आर्य समाज सन्नौर...

के नाम पर जो आडम्बर दिखाई दे रहा है, मूर्ति पूजा के कारण जो अन्धविश्वास फैल रहा है, सम्प्रदायवाद के कारण जो लड़ाई झगड़े हो रहे हैं, उन्हें दूर किया जा सके। सत्य सनातन वैदिक धर्म को अपनाकर सभी लोग संगठित होकर विदेशियों की दासता से मुक्त हों। महर्षि दयानन्द किसी नए पन्थ की मत की स्थापना नहीं करना चाहते थे। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी स्वमन्तव्या मन्तव्यप्रकाश में लिखते हैं कि- मैं अपना मन्तव्य उसी को मानता हूं जो तीन काल में सबको एक सा मानने योग्य है। मेरा कोई नवीन कल्पना वा मतमतान्तर चलाने का लेशमात्र भी अभिप्राय नहीं है किन्तु जो सत्य है उसको मानना, मनवाना और जो असत्य है उसको छोड़ना और छुड़वाना मुझ को अभीष्ट है। इसके पश्चात मुख्य मेहमान रेडियो, टैलीविजन, फिल्म तथा मंच कलाकार नटास के डायरैक्टर तथा पी.एस.पी. सी.एल के सेवामुक्त पब्लिक रिलेशन डायरैक्टर श्री प्राण सभ्रवाल, आर्य समाज पटियाला के प्रधान श्री राज कुमार सिंगला, तथा उनके साथ पधारे पटियाला आर्य समाज के सदस्य, श्री अरुण विद्यालंकार श्री विजेन्द्र शास्त्री जी का फूल मालाएं तथा सिरोपे भेंट कर अभिनन्दन किया गया। इस अवसर पर आर्य समाज सन्नौर के मंत्री श्री सतीश बदरू, कोषाध्यक्ष श्री नरेश भाटिया, उप प्रधान श्री प्यारा लाल, श्री अजय कुमार, सुरिन्द्र वालिया, राज कुमार, सुरेन्द्र कुमार, डाक्टर शंकर, रविन्द्र खन्ना, रीटा खन्ना, अनीशा खन्ना, शिवानी बदरू, हैल्पिं एवं वैल्फेयर सोसायटी के श्री नीरज गुप्ता, राधा रमन मंडल के पदाधिकारी व सदस्य, रैड रोज इंग्लिश माडल स्कूल, आर्य माडल स्कूल, के अध्यापक एवं छात्र उपस्थित थे। प्रधान श्री राजिन्द्र वर्मा जी ने आए हुये सभी आर्य बन्धुओं का धन्यवाद किया। शान्ति पाठ के पश्चात ऋषि लंगर का वितरण किया गया।

राजिन्द्र वर्मा प्रधान आर्य समाज

पृष्ठ 4 का शेष-कर्म फल सिद्धान्त और सृष्टि

होती हैं तो अब हम ऐसे कर्म न करें जिससे हमें पशु अथवा वृक्ष होना पड़े। किन्तु ऐसे कर्म करने चाहिए जिससे इन पशुओं अथवा वृक्षों के मूल कारण में ना जाकर केवल मनुष्य शरीर ही प्राप्त होवे।

मनुष्य शरीर भी तो दु:खों से भरा पड़ा है। राग-द्वेष, हानि, बिछोह, भय, चिन्ता, जन्म-मरण और अनिवार्य रूप से ऐसे कष्ट आते रहते हैं। राजा और शासन की परतन्त्रता के आभास को भोगना पड़ता है, तो विचार आता है क्यों न ऐसे कर्म किए जाये जिससे भविष्य में न तो शरीर धारण करना पड़े और न ही अन्य प्राणियों को कष्ट हो। एक ऐसा मोक्ष मार्ग बन जाए, जिसके द्वारा हमें भी मोक्ष मिल जाए और ये प्राणी भी मनुष्य शरीर में आकर मोक्षमार्गी बन जाएँ। कर्मयोनि और भोगयोनि के सिद्धान्त का लोग विरोध करते हैं, क्योंकि उनका कहना है कि जब मनुष्य ही कर्मयोनि में आता है और वही कर्म वश कर्मफल भोगने के लिए अन्य भोगयोनियों में आता है और वही किसी पानी के छोटे कुण्ड में कृमि रूप में आता है और इस कुण्ड में कृमि रूप में इतनी अधिक संख्या में पूर्व से ही विद्यमान हैं और ये संख्या विश्व के समस्त मानव संख्या से अधिक है तो क्या यह सम्भव है कि पृथिवी पर कभी इतने मनुष्य रहे होंगे।

अज्ञान और अभिमान से जो कार्य किए जाते हैं उनसे अन्य प्राणियों को दु:ख होता है। जिस कारण से उस दु:ख का प्रतिफल देने के लिए उनका चुकाया करने के लिए भिन्न-भिन्न योनियों में जन्म लेना पड़ता है। इसलिए किसी भी प्राणी को चाहे वह कीट है, पंतग है, मनुष्य, पक्षी, पशु, तृण, पल्लव कोई भी हो, कभी भी किसी को कष्ट नहीं देना चाहिए। यह विचार मोक्ष प्राप्त करने के इच्छुक के हैं। दूसरी तरह के लोगों की सोच इस प्रकार की है कि समस्त पशु-पक्षी, कीट-पंतग, तृण-पल्लव ने अपने कर्मों के अनुसार योनियाँ प्राप्त की हैं। यह उनके पूर्व जन्मों के कर्मों का ऋण चुका रहे हैं। तब इनके सुख, दु:ख, हानि-लाभ की बात सोचना ही व्यर्थ है। हम जिस प्रकार चाहें इनका उपभोग कर सकते हैं और अपने ऋण को प्राप्त करने में यदि उनका वध भी करना पड़े तो इसमें पाप की कोई बात नहीं आनी चाहिए।

अब न्याय की बात पर विचार करें, अपराध और दण्ड-विधान वादी और प्रतिवादी के अधीन नहीं होता किन्तु वह न्यायाधीश के अधीन होता है। प्रत्येक अपराधी अपने वादी का अपराधी नहीं है। किन्तु वह उस-उस न्यायाधीश का अपराधी है जिसने विधान तय किया है। इसलिए किसी भी वादी को यह अधिकार नहीं है कि वह किसी भी प्रतिवादी को सजा दे। इसी प्रकार ऋणदाता ऋणी से तकाजा ही कर सकता है, उसे दण्ड नहीं दे सकता। इसलिए मनुष्य को चाहिए कि वह इन पशु-पक्षी आदि किसी भी प्राणी को न तो कष्ट दे सकता है और न ही उसका वध कर सकता है। वह तो बिना कुछ कष्ट दिये कुछ काम लेते बने, ले लेना चाहिए। परमात्मा ने सबसे उत्तम नियम बनाया है कि प्रत्येक प्राणी को जाति, आयु और भोग नियत कर दिए हैं। जिस प्राणी से तुम काम लेना चाहो उसकी जाति के अनुसार उसको पूर्ण आयु जीने दो और उसकी जाति के अनुसार जो भोग उसे भोगना है बिना रूकावट के उसे भोगने दो।

जाति, आयु और भोग

सति-मूले तद्विपाको जात्या-युर्भोग:। -योग दर्शन

अर्थात् पूर्व कर्मानुसार प्राणियों को जाति, आयु और भोग मिलते हैं। और जाति क्या है? न्याय दर्शन में गौतम मुनि ने स्पष्ट लिखा है **'समान प्रसवात्मिका जाति।'** अर्थात् जिसका समान प्रसव हो, वह जाति है। जिसके संयोग से वंश चलता है। गाय और बैल के संयोग से वंश चलता है अत: वे एक ही जाति के हैं। घोड़ी व कुत्ते से वंश नहीं चलता, अत: वे भिन्न-भिन्न जाति के हैं।

जाति की दूसरी पहचान आयु है। समान प्रसव वाले प्राणियों की आयु भी समान होती है। गाय और बैलों की आयु समान है। जितने दिन घोड़ी जीती है उतने दिन कुत्ता नहीं जीता। जाति की तीसरी पहचान भोग है। जिनके समान प्रसव और समान आयु है, उनके भोग भी समान ही होते हैं। गाय और बैल के समान प्रसव, समान आयु है तो भोग भी समान ही है, अर्थात् आहार-विहार भी समान ही है। घोड़ी व कुत्ते का न तो समान प्रसव है, न ही समान आयु है तो आहार-विहार भी समान नहीं है। जहाँ घोड़ी घास खाती है, वहाँ कुत्ता मांस खाता है। तात्पर्य यह है कि प्रत्येक जाति का प्रसव-आयु और भोग समान ही होते हैं। इसलिए प्रत्येक मनुष्य का यह कर्तव्य हो जाता है कि जिस प्राणी से काम लेना हो उसकी जाति के अनुसार उसके भोगों को देखते हुए उसको पूर्ण आयु तक जीवित रहने का अवसर प्रदान करे।

वे मनुष्य जो प्राणियों को दु:ख देते हैं, वे परमात्मा के न्याय कार्य करते हैं और ऐसा मनुष्य पापी है क्योंकि राजा की दण्ड व्यवस्था में कैदी को मारने का अधिकार नहीं है। अन्य प्राणियों के भोग तथा आयु में बाधा पहुँचाना पाप है। सभी मनुष्य भी समान प्रसव और समान आयु वाले हैं, इसलिए उनके भोग भी समान होने चाहिए। इस प्रकार मनुष्यों की इस समानता में भी बाधा पहुँचाना पाप है।

जिस प्रकार कोई महाजन अपने ऋण को चुकाने के लिए अपने पास किसी ऋणी को रखता है तो वह उसका हर सम्भव उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है जिससे वह काम पर बना रहे। यदि मनुष्यों को मनुष्यों से, पशुओं से या वृक्षों से कुछ लेना हो तो उन्हें हर प्रकार से सुखी तथा सुरक्षित रखना चाहिए। सुखी रखने का तात्पर्य है प्रत्येक प्राणी की आयु, जाति तथा भोग जो सृष्टि द्वारा नियत है उसके भोग में कोई भी बाधा नहीं पहुँचाना। परमेश्वर द्वारा अकाल मृत्यु उसके स्वयं के नियम से है। इस कारण तेज बाढ़, सुनामी, तूफान, ज्वालामुखी, भूकम्प आदि से लाखों प्राणियों के जीवन का हरण करता है, करोड़ों प्राणियों को अकारण में ही संहार कर देता है।

जब मनुष्य अपनी हिंसावृत्ति से प्राणियों का संहार करते-करते उस स्थिति तक पहुँच जाता है कि उसको भी भोग करने से साधन भी नहीं बचे, तो वह अपने कर्मों का फल कैसे भोग पायेगा जब मनुष्य समस्त जंगलों को काटकर, पहाड़ों को तोड़कर, समुद्रों को धीरे-धीरे सिकोड़ता चला जाता है, भूगर्भिक पदार्थों को निकालता जाता है, खनन कार्य बढ़ा देता है, भूगर्भ जल को खींचता चला जाता है, इस प्रकार सृष्टि में व्युत्क्रम उत्पन्न कर देता है, इस कारण सृष्टि नियमों में बाधा पहुँचने लगती है, तब परमात्मा ऐसे अत्याचारियों को कीड़े-मकोड़े, कीट-पंतग आदि बनाकर उन्हें प्राकृतिक दुर्घटनाओं में समाप्त कर देता है।

मांसाहारी मनुष्यों को पशु बनाकर तथा पीड़ित पशुओं को हिंसक प्राणी बनाकर उन्हें अत्याचार का प्रतिफल देता है। जब प्राणियों का नाश इतना अधिक हो जाता है कि जीव का जन्म धारण करने के लिए पूरे माता-पिता की भी कमी आने लगती है तो इन थोड़े से ही माता-पिताओं में ही अधिक सन्तान उत्पन्न होने लगती है। परन्तु जब थोड़े से माता-पिता भी सब जीवों को उत्पन्न नहीं कर सकते तो आने वाले प्राणियों में कुछ ऐसे जहरीले प्राणी उत्पन्न होते हैं जो उस अत्याचारी मानव समाज का नाश करने के लिए तथा विभिन्न प्रकार के जहरीले कीटाणु बनकर मनुष्यों का नाश करने लगते हैं। कुछ ऐसे वृक्ष भी उत्पन्न हो जाते हैं जो मनुष्य आदि प्राणियों को पकड़-पकड़ कर खा जाते हैं और पशुओं तथा जंगलों की रक्षा करते हैं। सृष्टि के ये नियम अनादि हैं। यह सारा प्रबन्ध सृष्टि के नियमों की रक्षा करने के लिए किया जाता है।

पूर्व सृष्टि के अत्याचारों को प्रतिफल दिलाने हेतु परमात्मा की आदि सृष्टि में भी मकड़ी, बत्तखों की ऐसी योनियाँ उत्पन्न होती हैं जो स्वभावत: ही प्राणियों का नाश करती हैं। वर्षा, अग्नि, आँधी, भूकम्प अथवा सिंह-व्याघ्र आदि हिंसक पशुओं द्वारा अकाल मृत्यु की जो बात कही गई है उसका अर्थ यह नहीं कि मनुष्य भी अन्य प्राणियों को अकाल में मार डाले। तात्पर्य यह है कि मानुषी दुर्व्यवस्था के कारण परमेश्वरीय व्यवस्था के अलावा जिन प्राणियों ने दूसरे प्राणियों को अकाल में मार कर खाने का अभ्यास बना लिया है, अब वे समझ लें कि इस दुष्ट व्यवहार कर्म का फल भी भोगना है।

मनुष्य कर्म करता है और परमेश्वर उसी कर्म के अनुसार फल देता है अर्थात् आगे-आगे मनुष्यों के कर्म तथा पीछे-पीछे परमेश्वर की न्याय-व्यवस्था। परमेश्वर हिंसक पशुओं द्वारा मनुष्यों को और मनुष्यों के प्रिय बंधुओं को मरवाता है यह मनुष्यों की हिंसा प्रवृत्ति का प्रतिफल है। इस हिंसा को हम मनुष्यों द्वारा की गई हिंसा ही माना जावेगा। इसलिए मनुष्यों को उचित है कि वे किसी भी प्राणी की हिंसा नहीं करें। प्रत्येक प्राणी को उसकी योनि में आयु और भोग का उसे अधिकार है, जिससे वह श्रम से ऋण चुकाकर चला जाए। इस प्रकार का सृष्टि सम्बन्धी ज्ञान से सृष्टि के कारण-कार्य की मीमांसा को हृदयंगम किया जा सकता है। तब मनुष्य सृष्टि का उचित उपयोग कर सकता है और संसार के उचित उपयोग से मोक्ष प्राप्ति की दिशा में आगे बढ़ सकता है। मनुष्य सृष्टि के कारण-कार्य की श्रृंखला को समझकर ही न्याययुक्त व्यवहार कर सकता है। मनुष्यों को उचित है कि वे मोक्ष साधन के साथ ही सृष्टि का उपयोग करें।

आर्य समाज वेद मंदिर संत नगर जालन्धर का वार्षिकोत्सव

आर्य समाज वेद मंदिर संत नगर बस्ती शेख जालन्धर के वार्षिक उत्सव के अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के उप प्रधान श्री सरदारी लाल जी आर्य, रजिस्ट्रार श्री अशोक परूथी जी एडवोकेट एवं सभा मंत्री श्री सुदेश कुमार जी के पधारने पर उनका स्वागत करते हुये आर्य समाज के अधिकारी एवं अन्य सदस्य।

आर्य समाज वेद मन्दिर संत नगर बस्ती शेख जालन्धर का वार्षिक उत्सव 6 मार्च 2020 से 8 मार्च 2020 रविवार तक बड़े उत्साह के साथ मनाया गया। इस अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के महोपदेशक पं. विजय कुमार शास्त्री जी के प्रवचन तथा श्री सुरेन्द्र आर्य बस्ती बावा खेल जालन्धर के भजन हुए। 6 व 7 मार्च को रात्रि 8:00 से 10:00 बजे तक वेद कथा का आयोजन किया गया। मुख्य कार्यक्रम दिनांक 8 मार्च 2020 दिन रविवार को प्रात: 9:00 बजे विश्व शान्ति यज्ञ के साथ शुरू हुआ। यज्ञ के ब्रह्मा पं. विजय कुमार शास्त्री तथा पं. मनोहर लाल जी ने बड़ी श्रद्धा के साथ यज्ञ सम्पन्न कराया। यज्ञ की सम्पूर्ण व्यवस्था का प्रबन्ध आर्य समाज के पुरोहित पं. शशिकान्त जी ने किया। सभी श्रद्धालुओं ने बड़ी श्रद्धा के साथ यज्ञ किया और विद्वानों का आशीर्वाद प्राप्त किया।

यज्ञ के पश्चात ध्वजारोहण आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के रजिस्ट्रार श्री अशोक परूथी जी के करकमलों द्वारा किया गया। ध्वजारोहण के पश्चात मुख्य कार्यक्रम आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के वरिष्ठ उपप्रधान श्री सरदारी लाल जी आर्यरत्न की अध्यक्षता में प्रारम्भ हुआ। कार्यक्रम का शुभारम्भ स्त्री आर्य समाज भार्गव नगर की माताओं के द्वारा मधुर भजन के साथ प्रारम्भ हुआ। श्री सुरिन्द्र आर्य तथा श्री राजेश अमर प्रेमी जी ने भी अपने मधुर भजनों के द्वारा प्रभु भक्ति एवं महर्षि दयानन्द की महिमा का गान किया। श्री विजय शास्त्री जी के सुपुत्र श्री वरूण आर्य ने भी एक भजन प्रस्तुत किया। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के महोपदेशक पं. विजय कुमार शास्त्री जी ने अपने प्रवचनों में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के द्वारा बताए गए मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने कहा कि महर्षि दयानन्द द्वारा बताये गए मार्ग पर चलकर ही विश्व और मानवता का कल्याण हो सकता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने आर्य समाज की स्थापना करके भटके हुए समाज को एक नया मार्ग दिखाया था। हमारा देश अनेक प्रकार की कुरीतियों एवं बुराईयों में जकड़ चुका था। धर्म के सही स्वरूप को लोग भूल चुके थ, ऐसी विषम परिस्थितियों में ऋषि दयानन्द ने समाज को जागृत करने का कार्य किया। श्री सुरेश शास्त्री जी ने कहा कि कोरोना वायरस जैसी बीमारियों ने बचने के लिए हमें यज्ञ करना चाहिए। यज्ञ के द्वारा अनेक बीमारियों को दूर किया जा सकता है। आज पूरा विश्व भारतीय संस्कृति का अनुसरण करने को मजबूर हो रहा है क्योंकि भारतीय संस्कृति वेदों पर आधारित है और वेद किसी व्यक्ति विशेष के लिए नहीं अपितु सार्वभौमिक हैं।

श्री अशोक परूथी जी ने अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस की बधाई देते हुए कहा कि महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने ही नारी जाति को शिक्षा का अधिकार दिलाया है। आज नारी पुरूष के साथ कन्धे के साथ कन्धा मिलाकर कार्य कर रही है तो इसके पीछे महर्षि दयानन्द की प्रेरणा और पुरूषार्थ है। इसीलिए हमें ऋषि दयानन्द के कार्यो को याद करते हुए उनके प्रति कृतज्ञ होना चाहिए।

विधायक श्री सुशील रिंकु जी ने कहा कि वेदों के प्रचार–प्रसार के बिना संस्कृति की रक्षा सम्भव नहीं है। इसलिए युवा पीढ़ी को वैदिक संस्कृति से अवगत कराया जाए ताकि भारत **(शेष पृष्ठ छ: पर)**

आर्य समाज सन्नौर में महर्षि का जन्म दिवस एवं बोधोत्सव धूमधाम से मनाया

आर्य समाज सन्नौर जिला पटियाला में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का जन्म दिवस व बोधोत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया गया। इस अवसर पर आर्य समाज के पदाधिकारी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के भजनोपदेशक श्री अरुण विद्यालंकार एवं श्री विजेन्द्र शास्त्री जी को सम्मानित करते हुये ।

आर्य समाज सन्नौर में स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का जन्म व बोधोत्सव बड़ी धूमधाम एवं हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। 17 फरवरी को आर्य समाज भवन को बिजली की रोशनी एवं ओ३म् ध्वजों से सुसज्जित किया गया था। रात्रि को आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के भजनोपदेशक श्री अरुण विद्यालंकार के स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के जीवन पर मधुर भजन हुये जिसको आम जनता ने बहुत पसन्द किया। 18 फरवरी 2020 को ध्वजारोहण के पश्चात आर्य समाज पटियाला के पुरोहित श्री विजेन्द्र शास्त्री जी के सान्निध्य में पवित्र वेदवाणी द्वारा यजमानों ने अपने परिवार एवं समाज की सुख शान्ति के लिये यज्ञ में आहुतियां अर्पण की। श्री अरुण विद्यालंकार जी के मधुर भजन हुये। श्री विजेन्द्र शास्त्री जी ने बोधोत्सव पर प्रकाश डाला। उन्होंने अपने सम्बोधन में कहा कि आर्य समाज के नियमों को बनाते समय महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने आर्य समाज का जो लक्ष्य निर्धारित किया है, उसे पूरा करने के लिए संगठित होने की आवश्यकता है। उन्होंने अपने राष्ट्र का नहीं, आर्य समाज का नहीं अपितु संसार का उपकार करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य बताया ताकि हम अपने उद्देश्य से भटक न जाएं। महर्षि दयानन्द के जन्मदिवस पर हमारा लक्ष्य होना चाहिए कि हम लोगों को आर्य समाज के बारे में जानकारी दें। आर्य समाज के बारे में आम जनता में जो भ्रान्तियां फैल चुकी हैं, उन्हें दूर करने के लिए उन्हें आर्य समाज के सिद्धान्तों से अवगत कराएं। आर्य समाज की स्थापना के पीछे महर्षि दयानन्द जी का यही उद्देश्य था कि समाज में धर्म (शेष पृष्ठ छ: पर)

स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की तरफ से मुद्रक, प्रकाशक, सम्पादक प्रेम भारद्वाज द्वारा गायत्री प्रिंटिंग प्रैस, मण्डी रोड़ जालन्धर पंजाब से मुद्रित एवं गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से प्रकाशित।
सम्पादक-प्रेम भारद्वाज
पीआरबी एक्ट के तहत प्रकाशित सामग्री के चयन हेतु उत्तरदायी किसी विवाद का न्यायिक क्षेत्र जालन्धर होगा। आर एन आई संख्या 26281/74 **E-mail: apspunjab2010@gmail.com, www.aryapratinidhisabha.org**